माणुस्सं खु सुदुल्लहं

□ आचार्य श्री चन्दनमुनि जी

प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी धर्म में आस्था रखता हो अथवा न भी रखता हो, मानवता में विश्वास अवश्य रखता है। मानव में मानवीय गुणों का होना आवश्यक है। धर्म विश्वास और व्यक्तिगत आस्था की वस्तु है। उसमें विश्वास रखने वाला स्वर्ग-नरक, पुण्य-पाप, इहलोक-परलोक आदि के अस्तित्व में भी विश्वास करता है, परन्तु मानवता में विश्वास रखने वाले के लिये ऐसी बाध्यता नहीं है। मानव को सही रूप में मानव बनाने के लिये कुछ ऐसे व्यावहारिक नियम हैं, कुछ विशिष्ट गुण हैं, जिन्हें जीवन में उतारने से मनुष्य की दानवीय और पाशविक वृत्तियां नष्ट हो जाती हैं, फलत: उसके हृदय में मनुष्यत्व की उदार भावना का उद्भव होता है।

भगवान् महावीर ने मनुष्यत्व की प्राप्ति के चार हेतु बतलाये हैं। यदि ये चार गुण जीवन में साकार हो जाएं तो व्यक्ति मनुष्यता प्राप्त करने का अधिकारी हो जाता है। उन चार कारणों का उल्लेख करते हुये भगवान् महावीर कहते हैं—

"चउहिं ठाणेहिं जीवा मणुस्साउयत्ताए कम्मं पकरेंति तं जहा-पगइभद्दयाए, पगइविणीययाए, साणुक्कोसयाए, अमच्छरियाए।" —स्थानांग ४/६३०

चार कारणों से जीव मनुष्यत्व के योग्य कर्मों को संचित करता है। मनुष्य-भव की प्राप्ति के योग्य बनता है। वे चार कारण हैं—प्रकृति-भद्रता, प्रकृति-विनीतता, सानुक्रोश-भाव और अमात्सर्य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रथम गुण है—प्रकृति-भद्रता अर्थात् प्रकृति से- स्वभाव से भद्र होना— सरल होना। इस गुण को धारण करने वाला मानव स्वत: अच्छा बन जाता है। जो लोग प्रकृति से सरल होते हैं, वे दूसरों को सहज रूप में प्रिय लगते हैं। धर्म-कर्म, पूजा-पाठ, सामायिक-संवर आदि का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है जिनके स्वभाव में कृत्रिमता न हो, किसी प्रकार का दुराव-छिपाव न हो, भीतर और बाहर कोई भेद न हो, वे धार्मिक क्रिया-काण्ड न करते हुए भी धार्मिक होते हैं। उनका अन्त:करण पवित्र होता है।

बड़ी विचित्र बात है, जो वक्र होते हैं, स्वयं सरल नहीं होते, वे भी सरलता को पसंद करते हैं। दूसरों की वक्रता उन्हें अच्छी नहीं लगती। वस्तुत: भद्रता सभी को भद्र, सौम्य, प्रिय लगती है।

हमने "अन्तर्ध्वनि" नामक पुस्तक में एक स्थान पर लिखा है कि एक बार हम उदयपुर के परिसर की पहाड़ियों में प्रात: परिभ्रमण के लिये गये। किसी पहाड़ी की उपत्यका में स्थित होकर चारों ओर निहारने लगे, कहीं भारी-भारी पाषाण-खण्ड लुढ़के पड़े हैं, कहीं बड़ी-बड़ी चट्टानें अपने विशाल कलेवर को फैलाये सहज रूप में लेटी हैं, कहीं सूखा, कहीं हरा घास अर्धजरती (प्रौढ़ा) स्त्री के बालों के समान दृष्टिगोचर हो रहा है। सारा वातावरण अस्त-व्यस्त है, कहीं कोई सजावट नहीं है। फिर भी वह स्थल अत्यन्त मनोरम, रमणीय एवं आकर्षक प्रतीत हो रहा है। हमने उस पार्वतीय भू-स्थल से ही पूछ लिया कि तुम में किस बात का आकर्षण है। साज-सज्जा का तो कहीं नाम-निशान तक नहीं, फिर भी तुम अन्तःकरण को आकृष्ट करते हो, क्या कारण है? तभी मूक प्रत्युत्तर मिला कि हम अकृत्रिम हैं। हमारे पास कृत्रिम साज-सज्जा नहीं है, इसलिए हम आकर्षक हैं। यहां जो कुछ है, सहज है, बनावटी नहीं है, इसीलिये सुन्दर, मनोहर और मनमोहक है।

हमने एक सबक सीखा कि सहजता-प्रकृति की अकृत्रिमता प्रियता उत्पन्न करती है। जो मनुष्य शुष्क तर्क के स्पर्श से अछूता होता है, स्वत: सुन्दर होता है। इसी कारण प्रकृति की भद्रता मानवता की प्राप्ति के लिये आवश्यक प्रथम सद्गुण है।

दूसरा गुण है—प्रकृति-विनीतता। यह भी अपने आप में अनूठा है। विनीतता-नम्रता व्यक्ति को सर्वप्रिय बना देती है। इसमें अपने पास से कुछ नहीं लगता इसके द्वारा बहुत कुछ प्राप्त किया जा सकता है। विनयशील की सर्वत्र महत्ता होती है। सभी द्वारा उसे आदर प्राप्त होता है। जहां सहज रूप से गर्व का परिहार हो जाता है वहां कर्कशता स्थान नहीं पाती। जैनागमों ने तो "विणओ सासणे मूलं" कहकर इसके गौरव को शतगुणित कर दिया है। स्वस्थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूल पर ही स्कन्ध, शाखा, प्रशाखा, पत्र, पुष्प, फल आदि आधारित रहते हैं। यदि मूल सूख गया तो ऊपर वाले परिकरों की क्या आशा की जा सकती है?

प्राचीन जैन ग्रन्थों में यव राजर्षि का एक सुन्दर प्रसंग उल्लिखित है, जो विनयशीलता का जीवन्त उदाहरण है।

यवराज यवपुर नामक नगर के राजा थे। उनकी महारानी धारिणी ने एक पुत्र और एक कन्या को जन्म दिया। पुत्र का नाम गर्दभिल्ल तथा कन्या का नाम अणोलिका रखा गया। एक बार महाराज यव अपनी प्रिय पुत्री को गोद में लिये बैठे थे और नन्हीं बालिका के साथ क्रीड़ाः विनोद कर रहे थे, तभी एक नैमित्तिक (भविष्यवक्ता, ज्योतिषी) आया। उसने भविष्यवाणी की कि यह कन्या ऐसी सुलक्षणयुक्त है कि इसका पति निश्चित रूप से राजा होगा। राजपुत्री का पति राजा हो, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी अतः बात आई-गयी हो गई। परन्तु राजा के महामंत्री दीर्घपृष्ठ ने जब यह बात सुनी तो उसके मन में कुछ हलचल मच गई। उसने सोचा कि ज्योतिषी के अनुसार अणोलिका का पति अवश्य राजा बनेगा। क्यों न इस कन्या का विवाह मेरे पुत्र के साथ हो जाय, मेरा पुत्र भी कोई मांडलिक नरेश बन जायेगा।

अस्तु- समय बीतता रहा। गर्दभिल्ल पढ़ लिख कर योग्य बन गया। कन्या अणोलिका भी क्रमशः तारुण्य की ओर बढ़ने लगी।

एक बार चतुर्ज्ञानी आचार्य अभिधान सूरि का यवपुर में पदार्पण हुआ। धर्मोपदेश सुनकर राजा यव प्रतिबुद्ध हुये। उन्होंने तत्काल राज्य-शासन का परित्याग कर संयम-जीवन स्वीकार कर लिया। राज-काज का सारा भार राजकुमार गर्दभिल्ल पर आ पड़ा। दीर्घपृष्ठ सुयोग्य मंत्री था अतः राज्यकार्य के संचालन में वह पूरा सहयोग करने लगा। नये राजा गर्दभिल्ल ने शीघ्र ही सारी व्यवस्थाएं अपने नियन्त्रण में ले लीं।

राजर्षि यव मुनि बनकर गुरु की सेवा में तल्लीन हो गये। विनयशील होने के साथ साथ ये बड़े व्यवहार-कुशल तथा इंगिताकार-सम्पन्न भी थे। राजर्षि की अकृत्रिम भक्ति से गुरु भी बहुत प्रसन्न थे। गुरु चाहते थे कि सेवा-वैयावृत्त्य आदि के साथ-साथ यव कुछ ज्ञानार्जन भी करे अतः वे बार-बार उन्हें ज्ञानार्जन की प्रेरणा देते, यवऋषि! तुम्हें ज्ञानार्जन के लिये कुछ परिश्रम करना चाहिये। ज्ञान दीपक है, ज्ञान परम ज्योति है। क्रिया से भी ज्ञान का स्थान प्रथम है। अतः तुम्हें प्रयत्न करना चाहिए परन्तु यवराजर्षि के मस्तिष्क में यह भ्रम घर कर गया था कि मैं तो ढलती वय वाला हूं। अब मुझे ज्ञान-प्राप्ति कैसे हो सकती है? मैं तो गुरु-भक्ति के द्वारा ही कर्मों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की निर्जरा करता रहूंगा। पर कृपालु गुरुदेव उन्हें ज्ञान की दिशा में भी पुरस्सर-अग्रसर करना चाहते थे। यव राजर्षि पुनः पुनः यही कहकर टाल देते कि गुरुदेव ! आपकी कृपा ही मेरे लिये सब कुछ है। अब ज्ञान तो मुझे क्या प्राप्त होगा, बस, आप श्री की, स्थविरों की, ग्लान और शैक्षों की सेवा करता रहूं, यही आशीर्वाद दीजिये।

एक बार यव राजर्षि गुरु के साथ विहरणा करते हुए यवपुर के निकटवर्ती किसी नगर में पधारे। गुरु ने सोचा कि इनकी भ्रान्ति के निराकरण का यह समुचित अवसर है। इसलिये एक दिन मुनि यव को सम्बोधित कर गुरु ने कहा—यवमुनि ! यहां से तुम्हारी संसारपक्षीय राजधानी यवपुर बहुत ही कम दूर रही है। यदि तुम वहां जाओ और लोगों को प्रतिबोध दो तो बहुत अच्छा उपकार हो सकता है। सारी प्रजा तुम से परिचित है, अतः तुम्हें अपने प्रजाजनों और संबंधियों को धर्म लाभ, बोधिलाभ अवश्य देना चाहिये। यव राजर्षि मन ही मन बड़े संकुचित हो रहे थे कि मैं प्रजाजनों को क्या ज्ञान दूंगा, उन्हें क्या सुनाऊंगा? मुझे तो कुछ भी नहीं आता। फिर भी गुरु-आज्ञा को शिरोधार्य कर वे अपनी संसार पक्षीय राजधानी की ओर रवाना हो गये। मस्तिष्क में एक ही हलचल थी कि वहां जाकर क्या उपदेश सुनाऊंगा? प्रत्येक व्याख्याता को कथा के प्रारम्भ में कोई पद्य, गाथा अथवा आगमवाणी का उच्चारण करना आवश्यक होता है पर मुझे तो एक गाथा तक स्मरण नहीं।

इसी उधेड़बुन में मुनि आगे बढ़ते जा रहे थे। जिस मार्ग में वे चल रहे थे, मार्ग के दोनों और यवों (जौ) के खेत लहलहा रहे थे। किसान खेतों की रखवाली कर रहे थे। मुनि ने देखा कि एक गधा जौ खाने के लिये खेत के आस-पास चक्कर काट रहा था परन्तु खेत का मालिक हाथ में लाठी लिये बैठा था, इसलिये गधा जौ खा नहीं पा रहा था। गधे को जौ की ओर ललचायी दृष्टि से देखते अवलोकित कर किसान ने कहा—

"ओहावसि पहावसि, ममं चेव निरक्खसि।
लक्खिओ ते अभिप्पाओ, जवं पेच्छसि गद्दहा।"

अर्थात् गधे ! तू इधर दौड़ता है, कभी उधर दौड़ता है पर तू मुझे देख रहा है। मैं तेरा अभिप्राय जान चुका हूं, तू जौ खाना चाहता है।

जब यह गाथा यव राजर्षि के कानों में पड़ी तो उन्होंने सोचा, कम से कम इस गाथा को याद करलूं तो कथा के प्रारम्भ में तो कहने के काम आ ही जायेगी। ऋषि वहीं खड़े रह गये उस गाथा को ध्यान से सुनने लगे। प्रायः लाव द्वारा पानी खींचने वाले किसान लोग, एक ही शब्द या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पद को बार-बार गुनगुनाये जाते हैं। इसी भांति किसान भी इस गाथा को बार-बार दोहरा रहा था। यव राजर्षि ने उस गाथा का अवधारण कर लिया, उसे स्मृति में संजो लिया।

मुनि आगे बढ़े। मार्ग में किसी गाँव के पास से गुजरते हुए देखा कि कुछ बालक वहां गिल्ली-डंडा खेल रहे थे। यह हमारे देश की एक प्राचीन क्रीड़ा है। बीच में से मोटी तथा दोनों किनारों से नुकीली काठ की गिल्ली और डण्डे के साथ बालक गलियों में इससे खेलते हैं। छोटी-सी गिल्ली को डण्डे से आहत कर दूर उछालते हैं, कभी ऊंची उछालते हैं। दूर उछली गिल्ली को बच्चे फिर ढूंढ लाते हैं।

खेलते हुये बालकों ने जब गिल्ली को जोर से डंडे से आहत किया तो वह किसी अंध कूप में जा गिरी। वह बालकों की दृष्टि में नहीं आई। वे चारों तरफ उसे खोजने लगे पर गिल्ली उन्हें नहीं मिली। उस समय एक बुद्धिमान् बालक को यह सन्देह हो गया कि अवश्य ही गिल्ली इस अन्धकूप में जा गिरी है अतः उसने एक गाथा का उच्चारण किया—

"इओ गया, तओ गया, जोइज्जंति न दीसइ।
तुम्हे न दिट्ठा अम्हे न दिट्ठा, अगडे छूढा अणुल्लिया॥"

कोई कहता है इधर गई, कोई कहता है उधर गई, खोजते हुए भी दिखायी नहीं पड़ती। तुमने भी उसे नहीं देखा, हमने भी नहीं देखा। लगता है, वह अणुल्लिया—अणोलिका यानि गिल्ली अगड में—अन्धकूप में जा गिरी है।

राजर्षि ने सोचा—यह गाथा भी काम की है। उन्होंने उसे भी स्मृतिपट पर अंकित कर लिया।

मुनि के पास दो गाथाओं का संकलन हो गया। दोनों का मन ही मन पुनरावर्तन करते हुये वे आगे बढ़े। दिन ढलने लगा था। यव मुनि अपने नगर यवपुर के बाहरी भाग में आ पहुंचे। वहां एक कुम्हार के घर ठहरे। अपनी दैनिक चर्या से निवृत्त होकर मुनि बैठे थे। उन्होंने देखा कुम्हार के घर में चूहों के बहुत सारे बिल थे। मोटे-मोटे मूषक इधर-उधर दौड़ रहे थे, बिलों में जा रहे थे, आ रहे थे। चूहों को इस प्रकार खेलते हुए देखकर कुम्हार ने अपनी मस्ती में एक गाथा का उच्चारण किया—

"सुकुमालय-भद्दलया, रत्तिं हिंडणसीलया।
मम समा साओ नत्थि भयं, दीहपिट्ठाओ ते भयं॥"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ÛetneW! legce megkegâceej nes, keâesceue nes, Yeõ nes~ jeef$e kesâ meceÙe legce Dekeämej FOej-GOej Ûekeäkeâj ueieeles nes~ cet < ekeâes! legcnW cegPe mes keâesF& YeÙe veneR, hej oerIe&he = ... (meebhe) mes legcnW YeÙe nw~

गाथा सुनकर यव राजर्षि ने सोचा—एक यह गाथा भी अच्छी है, प्रवचन में काम आयेगी। कम से कम दो तीन प्रवचन तो देने ही होंगे। अत: इसे भी कंठस्थ कर लेना चाहिये।

मुनिवर ने वह गाथा भी याद कर ली। इस प्रकार यव राजर्षि के पास तीन गाथाओं का संबल हो गया। प्राय: ऐसा होता ही है, जिसने कभी भाषण न दिया हो, प्रवचन न किया हो, उसे प्रारम्भ में बहुत कुछ सोचना पड़ता है। इधर-उधर से सामग्री जुटानी पड़ती है। बोलने का क्रम जमाना पड़ता है। फिर भी मन में यह शंका बनी रहती है कि सभा के सामने कोई भूल न हो जाये। इसी चिन्ता में यव राजर्षि को रात में नींद नहीं आयी। कहीं यत्नपूर्वक सहेजी हुई गाथाएं विस्मृत न हो जायें, इसी भय से वे ऊंचे स्वर से रह-रहकर उन तीनों पद्यों का उच्चारण करने लगे।

दूसरी तरफ गर्दभिल्ल राजा बड़ी मुसीबत में था। राजकुमारी अणोलिका के विषय में भविष्यवाणी सुनकर महामंत्री दीर्घपृष्ठ की दृष्टि उस पर टिकी थी। वह किसी प्रकार उसका विवाह अपने पुत्र के साथ कर अपने पुत्र को राजा बनाना चाहता था। यवराजर्षि के गृहस्थाश्रम में रहते तो उसका वश चला नहीं। उनके मुनि बनने के पश्चात् गर्दभिल्ल राजा बना। उसने बहिन अणोलिका के लिये योग्यवर की खोज आरम्भ कर दी। परन्तु इसी बीच मौका पाकर दीर्घपृष्ठ ने अणोलिका का गुप्तरूप से अपहरण करवा लिया और उसे अपनी विशाल हवेली के तलघर में छिपा दिया।

राजा गर्दभिल्ल बहिन के अपहरण से भारी चिन्ता में पड़ गया। प्रिय बहिन को कौन दुष्ट अपहृत कर ले गया, गर्दभिल्ल समझ नहीं पा रहा था। चारों ओर बड़े जोर-शोर से राजकन्या की खोज होने लगी परन्तु स्थिति बिलकुल अस्पष्ट थी, सुराग नहीं लग रहा था। खोजियों की दौड़धूप से महामात्य मन ही मन शंकित था।

उन्हीं दिनों यव राजर्षि का नगर में पदार्पण हुआ। महामात्य को किसी व्यक्ति ने आकर सूचना दी कि यव राजर्षि पधारे हैं और नगर के बाहर किसी कुम्हार की कुटिया में ठहरे हैं। कल नगर में पधारने वाले हैं। कहावत है "चोर की दाढ़ी में तिनका", चोर का मन प्रति क्षण भयाक्रान्त बना रहता है। वह कभी आश्वस्त नहीं होता। अकस्मात् यवराजर्षि का पदार्पण दीर्घपृष्ठ के लिये कुशंका का हेतु बन गया। उसने सोचा—हो सकता है, किसी विशिष्ट साधना द्वारा मुनि को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोई ज्ञानोपलब्धि हो गई हो। कहीं ऐसा न हो कि ये मेरी कपटपूर्ण घटना के पट उघाड़ दें। अत: पहले इसका इंतजाम करना चाहिये कि राजा मुनि के नजदीक जाये ही नहीं।

महामात्य रात्रि के प्रथम प्रहर में अचानक राजा से मिलने आया और कहा—महाराज ! एक चिन्ताजनक स्थिति के सम्बन्ध में कुछ निवेदन करना चाहता हूं। असमय में महामात्य के आगमन से ही राजा सशंक हो उठा था। उसने कहा—शीघ्र कहो ! महामंत्री ने कहा—मुझे कुछ गुप्तचरों से पता लगा है कि आपके पिता यवराजर्षि मुनिधर्म से विचलित हो गये हैं। वे पुन: अपना राज्य अधिकृत करना चाहते हैं। इसीलिए वे अकेले यवपुर आये हैं तथा नगर के बाहर ठहरे हैं। आप सावधान रहें, कहीं आपके लिए कोई खतरा पैदा न हो जाये। राजा के आश्चर्य का पार नहीं रहा। साथ-साथ थोड़ा दु:ख भी हुआ कि उत्कृष्ट त्याग-वैराग्य से संयम स्वीकारने वाले पिता संयम मार्ग से चलित हो रहे हैं। यद्यपि बात पर विश्वास नहीं होता, फिर भी अकस्मात् अकेले यवपुर आने का क्या प्रयोजन हो सकता है ! राजा ने मंत्री को आश्वस्त करते हुए कहा—आप चिन्ता न करें, मैं रहस्य का पता लगाने का पूरा प्रयत्न करूंगा। दीर्घपृष्ठ चला गया परन्तु राजा की आंखों से नींद गायब हो गई। विचारों का मन्थन चलने लगा। आखिर अकेला राजा हाथमें खड्ग लेकर नगर के बाहर स्थित कुम्हार की कुटिया के पास पहुंचा। सीधे मुनि के पास न पहुंचकर गर्दभिल्ल बेचैनी से कुटिया के बाहर चक्कर लगाने लगा। उसी समय मुनि ने पुनरावर्तन हेतु प्रथम गाथा का सस्वर पारायण किया —

"ओहावसि पहावसि, ममं चेव निरक्खसि।
लक्खिओ ते अभिप्पाओ, जवं पेच्छसि गद्दहा।"

गाथा सुनकर राजा के पांव ठिठक गये। गाथा उस पर पूर्णतया घटित हो रही थी। वहां किसान ने गधे को सम्बोधित कर गाथा का उच्चारण किया था, यहां राजा का नाम गर्दभिल्ल था। उधर यवों का खेत था, इधर स्वयं राजर्षि यव थे। अत: गाथा का तात्पर्य यहां भी इस प्रकार घटित होता था कि गर्दभिल्ल ! तू कभी इधर देख रहा है, कभी उधर, परन्तु तू मुझे ही देख रहा है, तेरा अभिप्राय मैंने समझ लिया है।

राजा विचार करने लगा कि मुनिवर्य तो अन्तर्ज्ञानी हैं। अन्धकार पूर्ण रात्रि में कुटियाके भीतर इन्हें कैसे पता चला कि मैं इनको देखने ही यहां आया हूं। यदि मेरी खोई हुई बहिन का कुछ पता ये बतला दें तो मैं समझूंगा कि ये विशिष्ट ज्ञान के धारक हैं और मेरी इनके प्रति जो धारणा बनी है, वह सर्वथा निर्मूल है।

इधर राजा ने सहज भाव से यह चिन्तन किया, उधर संयोगवश यव राजर्षि ने दूसरी गाथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का पारायण किया :—

"इओ गया तओ गया, जोइज्जंती न दीसइ।
अम्हे न दिट्ठा तुम्हे न दिट्ठा, अगडे छूठा अणुल्लिया ॥"

वहां गाथा में अणुल्लिका गुल्ली को कहा गया था, यहां कन्या का नाम अणुल्लिका या अणोलिका था। यह गाथा भी यहां घटित हो गई। अर्थात् बहुत अनुसंधान करने पर भी अणोलिका का पता नहीं लग रहा है। वह तो अगड में- अन्ध कूप में अथवा भूगर्भगृह में क्षिप्त है- छिपाई हुई है।

इतना सुनते ही राजा चौकन्ना हो गया। मेरी बहिन किसी गर्भ-गृह में छिपाई हुई है। परन्तु महामात्य ने तो मुझे कहा था कि राजर्षि यव मुझे मारकर पुनः राज्य हथियाना चाहते हैं। यदि पिताश्री मेरी इस आशंका को निर्मूल करदें तो आगे की गुत्थी सुलझ जाए। मैं आजीवन इनका ऋणी रहूंगा।

दूसरी ओर मुनि के स्वाध्याय में तीसरी गाथा का क्रम आया —

"सुकुमालय-भद्दलया, रत्तिं हिंडणसीलया।
मम समासाओ नत्थि भयं, दीहपिट्ठाओ ते भयं ॥"

अरे सुकुमार-सुकोमल ! भद्रप्रकृते ! रात्रि-भ्रमण करने वाले ! मेरी ओर से तुझे कोई भय नहीं है पर तुझे तो दीर्घपृष्ठ से भय है।

यहां यह ज्ञातव्य है कि कुम्भकार का दीर्घपृष्ठ से सर्प का आशय था, जबकि यहां दीर्घपृष्ठ से महामात्य का नाम संकेतिक होता था।

उपर्युक्त गाथा सुनते ही गर्दभिल्ल बिना मुनिदर्शन किये बाहर से ही अपने महल में लौट आया। सवेरा होने से पहले-पहले उसके आदेश से महामंत्री के आवास की तलाशी ली गई, पूरी छानबीन की गई। उसकी हवेली के तलघर में छिपाई गई अणोलिका को बरामद कर लिया गया। बहिन-भाई मिले। राजकुमारी के अपहरण का उद्देश्य क्या था, स्पष्ट हो गया। तत्काल महामंत्री की सारी संपत्ति जब्त कर ली गई और राजद्रोह के अपराध में उसे देश से निर्वासित कर दिया गया।

हर्षोल्लास और उत्साह के साथ राजा गर्दभिल्ल सपरिवार राजर्षि यव के दर्शनार्थ आया। मंत्री, सामन्त, सेनानायक आदि साथ थे। सूचना पाकर यवपुर की जनता भी उमड़ पड़ी। स्वागत-सत्कार के साथ मुनिवर का नगर में पदार्पण हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यव राजर्षि का भक्तिपूर्वक अभिनन्दन करते हुए राजा ने कहा—ऋषिवर ! धन्य है आप ! इतने थोड़े समय में आपने इतना बड़ा अन्तर्ज्ञान उपलब्ध कर लिया । आपके आगमन मात्र से मेरी सारी समस्याएं समाहित हो गई ।

राजर्षि मन ही मन विस्मित थे राजा किस अन्तर्ज्ञान का जिक्र कर रहा है ? मेरे पास कौन सा ज्ञान है ! राजा ने पुनः कहा—प्रभो ! आप द्वारा उच्चारित तीन गाथाओं ने मेरी सारी गुत्थियां सुलझादीं, वरना दीर्घपृष्ठ का दुश्चक्र तो बड़ा भयंकर था ।

यव मुनि मन ही मन समझ गये कि यह तो पूज्य गुरुदेव की सेवा का ही, कृपा का ही फल है, अन्यथा ये साधारण गाथाएं किस प्रकार इतनी फलप्रद हो सकती थी । मैं कैसा मन्दभाग्य हूं, गुरुदेव मुझे अध्ययन करवाना चाहते हैं और मैं अपनी भ्रान्ति के कारण उस ओर ध्यान ही नहीं देता । आज मेरे सामने यह प्रत्यक्ष चमत्कार है कि ज्ञान का कण्ठाग्र होना कितना उपयोगी सिद्ध होता है । कहा है—"न वि अत्थि, न वि य होई, सज्झायसमं तवोकम्मं" अर्थात् स्वाध्याय के समान तप न हुआ है, न हो सकता है । यह चिन्तन कर यव राजर्षि स्वाध्याय में प्रवृत्त हो गये । वे बाह्य तप के साथ साथ आभ्यन्तर तप में भी लीन रहने लगे ।

यहां मनुष्यत्व के दूसरे हेतु का विवेचन चल रहा है। उपर्युक्त घटना से स्पष्ट है, विनयशीलता क्या प्राप्त नहीं कराती । विनयशील शिष्य राजर्षि यव की तरह उत्तमोत्तम गुणों के पात्र बनते हैं ।

मानवता का तीसरा कारण बतलाया गया है—सानुक्रोशता— दयालुता, कृपा परायणता । यह भी अपने आप में एक विशिष्ट गुण है । जिस व्यक्ति के हृदय में दया की भावना नहीं होती, किसी का बाह्य या आन्तरिक उत्पीड़न देखकर जिसका हृदय करुणार्द्र नहीं होता, वह वस्तुतः हृदयहीन है । वह दिल क्या है, दरअसल पत्थर है । चाहे व्यक्ति किसी भी धर्म को नहीं मानता हो, किसी साधना-पद्धति में विश्वास नहीं रखता हो पर हृदय की कोमलता तथा सहानुभूति के भाव तो हर किसी में होने ही चाहिए। अन्यथा वह मानवता का अधिकारी ही नहीं हो सकता । अनुकम्पा विश्व का आधार है । इसी से जगत् सुस्थित है । यदि हिंसा को खुलकर खेलने का अवसर मिल जाए तो संसार में त्राहि त्राहि मच जायेगी । इसीलिए दया को भगवती, जननी कहा गया है । प्रश्नव्याकरण सूत्र में तीस विभिन्न नामों से अहिंसा को व्याख्यात किया गया है ।

मनुजत्व का चौथा हेतु है अमत्सरता । मत्सर एक बहुत बड़ा दुर्गुण है । इससे मन में द्रोह, ईर्ष्या, द्वेष आदि की प्रवृत्ति बढ़ती है । दूसरे का सद्गुण देखकर मन में जलन पैदा होती है । मात्सर्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधक के लिए तो घातक है ही, सामान्य जन से भी यह मानवत्व का अधिकार छीन लेता है। आचार्य हेमचन्द्र अभिधान- चिन्तामणि में लिखते हैं —

"द्विजिह्वो मत्सरी खल: ।"

मत्सरी को द्विजिह्व भी कहा जाता है। द्विजिह्व सर्प का भी नाम है मात्सर्ययुक्त व्यक्ति एक प्रकार से सांप की ज्यों विषैला प्राणी है।

मानवता का यह चौथा हेतु हमें प्रेरित करता है कि सभी स्थानों में हम गुणों पर ही ध्यान दें, किसी के दुर्गुण न देखें। किसी को बुरा बतलाने की चेष्टा न करें। इसी से हमें मनुष्य कहलाने का अधिकार प्राप्त हो सकता है, मानवता की सच्ची भूमिका का निर्माण हो सकता है।

ये चारों ही कारण अपने आप में बहुत महत्त्वपूर्ण है। प्रभु महावीर के उपदेशानुसार यदि कोई इन्हें जीवन में उतार लेता है, वह सही अर्थ में मानव बन जाता है तथा भवान्तर में भी मानव बनने की भूमिका प्राप्त कर लेता है।

□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org